खुशवंत सिंह : वह दरवेश जिसकी जिंदगी उसकी कलम से कम चटपटी नहीं थी

कुछ लोग बड़ी बेबाकी से जीवन जीते हैं और उसका गुणगान भी बेबाकी से करते हैं. इतनी कि कई बार उनके बेशर्म होने का अंदाजा होता है. उन्हें इस बात से कोई सरोकार नहीं होता कि लोग उनके उनके बारे में क्या सोचते हैं. पर हक़ीक़त कुछ और ही होती है और ऐसे चंद लोगों का फ़लसफ़ा किसी दरवेश के फ़लसफ़े से कम नहीं होता. खुशवंत सिंह भी ऐसे ही लोगों में शुमार होते हैं.

अंग्रेज़ी के जाने माने लेखक खुशवंत सिंह के आगे रोज़गार का मसाइल तो था पर रोटी का नहीं. उनके पिता ठेकेदार सरदार सर सोभा सिंह ने दिल्ली का कनॉट प्लेस बनाया था तो आप अंदाज़ा लगा सकते हैं कि उनके पास विरसे में ठीक-ठाक पैसा रहा होगा और शायद वह बेबाकी भी इसी वजह से रही होगी.

पर यह कुछ फ़ास्ट फॉरवर्ड में हो गया, ज़रा पीछे चलते हैं. बचपन छोड़ दें तो उनका जीवन लाहौर से शुरू होता है. लंदन से वकालत पढ़कर आने के बाद वे इस शहर में बतौर वकील कानून से जुड़ गए. कुछ दिन बाद दिल उचटा तो भारतीय विदेश सेवा में नौकरी कर ली. वक़ालत उन्हें रास नहीं आई. मज़ाकिया अंदाज़ के लिए मशहूर खुशवंत सिंह ने एक दफ़ा अपने बारे में कुछ यूं बताया था, 'जदों मैं विलायत तों पढ़कर आया सी तां मेरे प्यो ने पिंडा दे लोग पुच्छया कि त्वाडा पुतर की पास कर आया. प्यो ने दसया 'कुछ नहीं यारा, टाइम पास कर आया'.

जल्द ही खुशवंत सिंह ने भारतीय विदेश सेवा की नौकरी भी छोड़ दी और आल इंडिया रेडियो में लग गए. फिर उन्होंने ताउम्र लेखक बनने का फ़ैसला कर लिया जिसे पूरे कौल से निभाया. खुशवंत सिंह का बेहद ज़बरदस्त सेन्स ऑफ़ ह्यूमर था और बेबाकीपन दूसरा सबसे बड़ा औज़ार. इन दोनों की सान पर उन्होंने अपनी कलम की धार को तेज़ किया. कई सारे अख़बारों और पत्रिकाओं के लिए उन्होंने लिखा. कइयों से रिश्ते बनते-बिगड़ते रहे. जिस इंग्लिश मैगज़ीन 'इलसट्रेटेड वीकली ऑफ़ इंडिया' को उन्होंने फ़र्श से अर्श तक पहुंचाया था उसके प्रबंधन ने रिटायरमेंट से कुछ दिन पहले ही उन्हें बर्खास्त कर दिया. हिंदुस्तान टाइम्स में उनका सप्ताहांत कॉलम 'विथ मलाइस टुवर्ड्स वन एंड आल' काफ़ी चर्चित कॉलम था.

इस कॉलम का कार्टून मशहूर कार्टूनिस्ट मारिओ मिरांडा ने बनाया था जिसमें उन्होंने खुशवंत सिंह को

स्कॉच की बोतल, कुछ किताबों और एक मैगज़ीन के साथ बल्ब में ठूंस दिया. और फिर वे इसी से पहचाने गए .

खुशवंत सिंह का लेखन बौद्धिक स्तर का तो नहीं कहा जा सकता. आप उन्हें नीरद चौधरी, वीएस नायपॉल, मुल्क राज आनंद या आरके नारायण के समकक्ष नहीं बिठा सकते. हां, लोगों को क्या पसंद है, व बखूबी जानते थे और वही परोसते थे और इसीलिए पढ़े जाते थे. उन्हें मालूम था कि लोग चटखारे पसंद करते हैं. दूसरों के जीवन में ताक-झांक और उनके नाजायज़ रिश्ते आंखों से नहीं लपलपाती जीभ से पढ़े जाते हैं. उन्होंने इन्हें परोसने से गुरेज़ नहीं किया. पर ऐसा भी नहीं कि वे शोभा डे की तरह सिर्फ़ सॉफ्ट पोर्न लिखते थे. उससे कहीं ऊपर और ऊपर बताए गए लेखकों से कुछ नीचे, यानी वे बीच की कड़ी थे, जो किसी भी सिलसिले में उतनी ही ज़रूरी है जितनी कि अन्य कड़ियां.

बावजूद इसके 'अ हिस्ट्री ऑफ़ द सिख्स' (सिखों का इतिहास), कन्निंग्हम और डॉ गोपाल दास के इसी विषय पर लिखे गए इतिहास से कम रोचक नहीं है. 'ट्रेन टू पाकिस्तान' जिसे उन्होंने पहले 'मन्नू माजरा' नाम दिया था, बेहद सटीक उपन्यास था. इसकी भाषा शैली वैसी ही थी जैसी होनी चाहिए. उस किताब की एक बेहद गर्मा-गर्म लाइन थी-हिंदुस्तानियों का दिमाग़ हर पल सिर्फ़ सेक्स के बारे में सोचता रहता है और अगर कुछ देर के लिए भटक जाए तो तुरंत इसी मुद्दे पर लौट आता है- इसको पढ़कर लोगों के दिमाग़ झन्नाये तो नहीं पर हां, कुछ पल के लिए सोचने पर मजबूर हो गए कि बात तो ठीक ही है! विभाजन का दर्द झेलने वाले खुशवंत 'ट्रेन टू पाकिस्तान' के जरिये उसे मुकम्मल तरीके से बाहर ले आते हैं.

खुशवंत सिंह उर्दू से मुहब्बत रखते थे और मुसलामानों के हमदर्द थे. उर्दू के लिए वे कहते कि ये डेरे की ज़बान है – यह उन डेरों में पैदा हुई है जिनमें कई इलाकों के सैनिक लड़ने के लिए इकठ्ठा होते थे. मुसलमानों का वे इतना पक्ष क्यों लेते हैं, यह पूछने पर वे कहते कि आख़िर कोई तो हो जो उनपर पर लिखे! पार्टीशन के लिए उन्होंने मोहम्मद अली जिन्ना से ज़्यादा लाला लाजपत राय और बाल गंगाधर तिलक और कुछ हिंदू संगठनों को ज़िम्मेदार माना. लेखिका हुमरा कुरैशी को दिए इंटरव्यू में उन्होंने कहा था कि मुस्लिम लीग के द्वि-राष्ट्रीय सिद्धांत से पहले कुछ हिंदू संगठन ऐसे नक़्शे भी बना चुके थे.

हुमरा कुरैशी ने उनसे कई सारे मसलों पर उनकी राय पूछी और उन्होंने भी बड़ी ईमानदारी से जवाब दिया. मिसाल के तौर पर कुछ बातें यहां पेश हैं. बुढ़ापे पर उन्होंने कहा कि 'दिल अब भी बदमाश है. बुरे-बुरे ख़याल आते हैं और जब मैं फ़ेन्टसाइज़ करता हूं तो बड़ा अच्छा लगता है.' सेक्स और रोमांस के बीच जब उन्हें चुनने के लिए कहा गया तो उन्हें सेक्स को ये कहकर तरजीह दी कि रोमांस में काफ़ी समय ख़राब हो जाता है और यह भी कि एक व्यक्ति के साथ लगातार सेक्स करते हुए आदमी बोर हो जाता है. उनके शब्दों में 'फिर वो बात नहीं रहती'. हुमरा को उन्होंने यह भी बताया कि उनकी शादी में जिन्ना आये थे और शराब ऐसे बही मानो जमुना नदी में बाढ़ आई हो. हालांकि यह शादी ज़्यादा सफल नहीं रही और कई बार दोनों पति पत्नी ने तलाक़ लेने का भी सोचा, पर बच्चों की ख़ातिर अलग नहीं हुए.

कुछ शख़्सियतों के बारे में

गांधी सबसे पहले और सबसे ऊपर. उन्होंने क़ुबूल किया है कि वे गांधी भक्त थे. नेहरू के लिए उनके पास इकबाल का इकबाल का शेर था : 'निगाह बुलंद, सुखन दिलनवाज़ और जां पर सोज़, यहीं हैं रख़्ते-सफ़र मीरे कारवां के लिए'. यानी लीडर वह जो दूर दृष्टा, अच्छा वक्ता और जां को जलाने वाला हो. उनकी नज़र में इन बातों के अलावा नेहरू में सबसे ख़ास बात थी कि वे धर्म-निरपेक्ष थे और लोकतंत्र में उनका अटूट भरोसा था. इंदिरा गांधी को कभी उन्होंने ज़्यादा नंबर नहीं दिए क्यूंकि उन्होंने राष्ट्रीय संस्थाओं को कमज़ोर किया और आपातकाल लगाया. हैरत की बात है कि ऑपरेशन ब्लू स्टार के बाद भी उनकी नज़र में इंदिरा सिख विरोधी नहीं थीं और जिस तरह से उन्हें मारा गया, वह ग़लत था.

9 पॉइंट्स का उनका फ़लसफ़ा बेहद सादा पर मुकम्मल था. एक, अच्छी सेहत. ज़रा सी भी ख़राबी कुछ न कुछ खुशियाँ कम कर देती है. दो, ठीक ठाक सा बैंक बैलेंस जिससे आप आराम से रह सकें और अपनी खुशियों पर ख़र्च कर सकें. साथ ही उधार से बचें. तीन, किराये के मकान में खुशी नहीं मिलती, खुद का होना चाहिए. चार, समझदार जीवन साथी या दोस्त. पांच, जो ऊपर निकल गए या आगे बढ़ जाये उनसे चिढ़ना नहीं. छह, लोगों के मज़ाक का पात्र न बनें. सात, कोई शौक़ जीने के लिए ज़रूरी है. आठ, कुछ समय आत्म विवेचना के लिए निकालें और नौ, आपा न खोएं.

हुमरा कुरैशी जब उनसे मिलीं तो वे 95 साल के थे. उन्होंने कहा, 'मुझे अब मौत का ख़याल आता है पर डर नहीं लगता. मेरे हमउम्र, हमसफ़र जो कहीं भी थे, सब इस लाफ़ानी दुनिया से रुख़सत हो गए. नहीं जानता कि आने वाले एक दो सालों में कहां होऊंगा. ग़र मुझे मौत आये तो बड़ी ख़ामोशी से और जल्द ही. मैं लाचार बनकर नहीं मरना चाहता और जब ज़िन्दा हूं जो दिन जैसा आता है वैसा ही जीता हूं. सब कुछ पा लिया है'. फिर भी जीने की ज़िद पर वो इक़बाल का शेर पढ़ते हैं. 'बागे-बहिश्त से मुझे हुक्मे सफ़र दिया था क्यूं. कार-ए-जहां दराज़ है, अब मेरा इंतज़ार कर.'

अगर कोई है जो किसी को भेजता है और बुलाता है तो उसने खुशवंत सिंह का तीन साल और इंतज़ार करने के बाद 20 मार्च, 2014 को अपने पास बुला लिया. दिल्ली के सुजान सिंह पार्क के किसी एक बंगले में अब सुबह चार बजे बत्ती नहीं जल उठती. 'एक शम्मा है दलील-ए-सहर सो ख़ामोश है।'

साभार- https://satyagrah.scroll.in/ से